www.thearyasamaj.org

आर.एन.आई. रजि० नं० HRHIN/2003/10425
डाक पंजीकरण संख्या : RTK/10/2014-16

सृष्टि संवत् 1960853117
विक्रम संवत् 2073
दयानन्दाब्द 193

सेवा में,

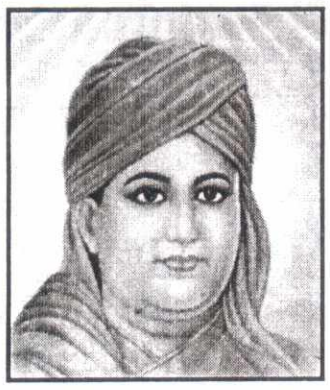

महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का साप्ताहिक मुखपत्र दूरभाष : 01262-216222, Mob. 8901387993
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in
Website : www.apsharyana.org
विदेश में वार्षिक शुल्क : 75 डॉलर विदेश में आजीवन शुल्क : 300 डॉलर सम्पादक : आचार्य योगेन्द्र आर्य

वर्ष : 13 अंक : 30 रोहतक, 7 जनवरी 2017 वार्षिक शुल्क : 150/- आजीवन 1500/-

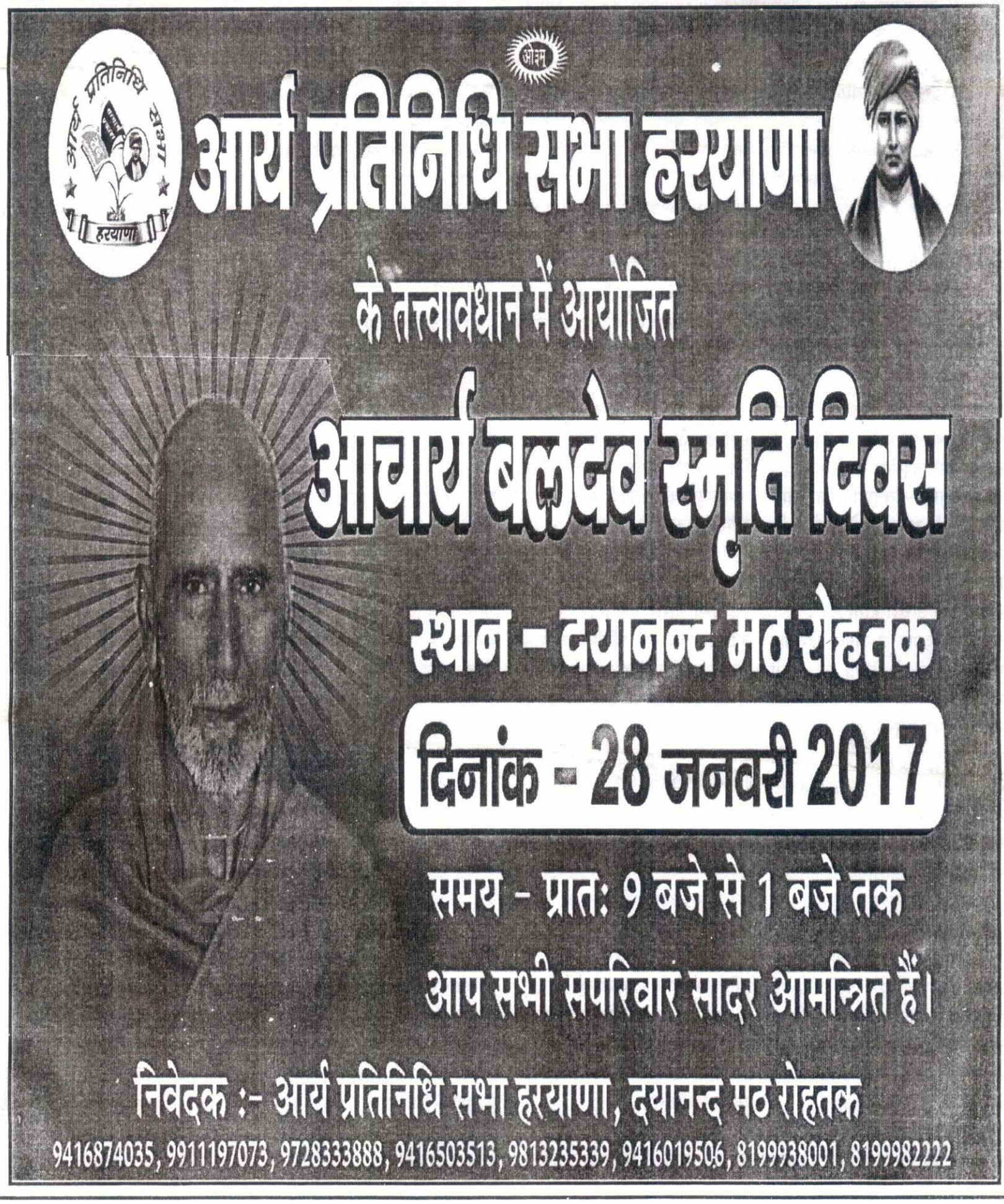

www.thearyasamaj.org

महान् क्रान्तिकारी पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल

❑ डॉ० प्रमोद योगार्थी प्राचार्य दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार

पूर्व कांग्रेस अध्यक्ष पट्टाभि सीतारमैया ने कांग्रेस का इतिहास लिखते हुए कहा है कि स्वतंत्रता संग्राम में सर्वाधिक संख्या आर्यसमाज से जुड़े क्रान्तिकारियों की थी। स्वतन्त्रता की लड़ाई में 85 प्रतिशत आर्यसमाजी देशभक्त जेलों में बंद किए गए थे।

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती स्वयं देशभक्त, वेदभक्त, ईश्वरभक्त एक तेजस्वी संन्यासी थे। दयानन्द सरस्वती के गुरु स्वामी विरजानन्द दण्डी एवं विरजानन्द के गुरु स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती ने सन् 1857 ई० के स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़-चढ़कर भाग लिया था। यद्यपि 1857 के स्वतन्त्रता आन्दोलन तक महर्षि दयानन्द सरस्वती की भेंट गुरु विरजानन्द दण्डी से नहीं हुई थी परन्तु स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं गुरु विरजानन्द दण्डी दोनों ने 1857 के स्वतन्त्रता आन्दोलन में अपने-अपने ढंग से बढ़-चढ़कर भाग लिया था।

स्वामी दयानन्द ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में क्रान्तिकारी उद्घोष करते हुए एक वाक्य लिखा—**विदेशी राजा चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो यानि माता-पिता के समान सुखदायक हो, फिर भी उससे अपना स्वदेशी राज्य कहीं अच्छा होता है।**

इस उद्घोष से अनेक नौजवान क्रान्तिकारियों ने प्रेरणा ली। इसी उद्घोष को आधार बनाकर क्रान्तिकारी बालगंगाधर तिलक ने कहा था-**आजादी हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।** यद्यपि बालगंगाधर तिलक को बचपन से देशभक्ति के संस्कार मिले थे परन्तु सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय से तिलक में देशभक्ति के संस्कार और ज्यादा वेग से फूट पड़े।

इसी प्रकार श्यामजीकृष्ण वर्मा, भाई परमानन्द, लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल एम.ए., दादाभाई नौरोजी, वीर सावरकर आदि अनगिनत क्रान्तिकारी देशभक्तों का प्रादुर्भाव स्वामी दयानन्द सरस्वती व आर्यसमाज के सम्पर्क में आने से हुआ।

क्रान्तिकारियों की लम्बी श्रृंखला में पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल का नाम बड़े गौरव से लिया जाता है। रामप्रसाद बिस्मिल ऊँचे चरित्र वाले नवयुवक देशभक्त थे। शरीर से बलिष्ठ, मन से साहसी और आत्मा से पवित्र तथा समर्पित आर्य सिद्धान्तों के अनुयायी क्रान्तिकारी थे।

रामप्रसाद बिस्मिल का जन्म उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर नगर में सन् 1898 ई० को पण्डित मुरलीधर के घर में हुआ। यद्यपि परिवार में धार्मिक वातावरण था परन्तु बचपन की कुसंगति के कारण बिस्मिल धूम्रपान आदि दुर्व्यसनों में फंस गये, जिससे परिवार को बड़ी चिन्ता रहती थी। लेकिन यह सुखद संयोग था कि इनके घर के पास एक आर्यसमाज का मन्दिर था। जहां आर्यसमाज के अनेक साधु-सन्त, विद्वान् समय-समय पर उपदेश देने के लिए आया करते थे और इस मन्दिर में बिस्मिल का आना जाना भी रहता था।

एक बार इसी मन्दिर में विद्वान् मुंशी इंद्रजीत का आना हुआ। इन्होंने बिस्मिल को सन्ध्या करना सिखाया तथा पढ़ने को सत्यार्थ प्रकाश दिया। सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय से एवं मुंशी इंद्रजीत के सदुपदेश से बिस्मिल में कुछ-कुछ परिवर्तन आने लगे।

इसी दौरान लाहौर से चलकर आर्यसमाज के एक प्रतिष्ठित संन्यासी स्वामी सोमदेव जी इस आर्यसमाज में पधारे। स्वामी सोमदेव जी के प्रवचन सुनकर बिस्मिल आर्यसमाज के सिद्धान्तों से बहुत ही प्रभावित हुए। स्वामी सोमदेव जी ने बिस्मिल के हृदय में देशभक्ति के संस्कार कूट-कूटकर भरे थे। उन्होंने दुर्व्यसनों को छोड़कर तपस्वी जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया। अपने परिवर्तन के बारे में वे स्वयं लिखते हैं—**सत्यार्थ प्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में नवीन पृष्ठ खोल दिए। मैं तख्त पर कम्बल बिछाकर सोता और प्रातः 4 बजे ही जागकर शौच, स्नान व सन्ध्या से निवृत्त होकर व्यायाम करता।**

ब्रह्मचर्य धारण व नियमित व्यायाम करने से बिस्मिल का शरीर बलिष्ठ और बुद्धि सद्बुद्धि बन गई। प्रतिदिन सन्ध्या-हवन करने लगे। सत्यार्थ प्रकाश जैसे ग्रन्थों का स्वाध्याय करने लगे और पक्के देशभक्त आर्यसमाजी बन गए। स्वामी सोमदेव जी के प्रवचन से बिस्मिल को आर्यसमाज की राजनैतिक व धार्मिक समस्त गतिविधियों का भी बोध हो गया। अब उन्होंने आर्यसमाज को ही अपना घर बना लिया।

पिताजी पक्के सनातनी ब्राह्मण थे। आर्यसमाज के सिद्धान्तों को पसन्द नहीं करते थे। इसलिए वे नहीं चाहते थे कि मेरा पुत्र बिस्मिल आर्यसमाज मन्दिर में जाए। एक दिन पिता ने क्रोध में आकर कहा-**बिस्मिल! आर्यसमाज में जाना छोड़ दो या घर को छोड़ दो।**

ऐसी धर्मसंकट की स्थिति में बिस्मिल ने घर छोड़ने का निर्णय लिया और आर्यसमाज में रहने लगे। परन्तु पुत्र मोह के समक्ष पिता का हृदय झुक गया और कुछ दिन बाद पिता ने बिस्मिल को घर बुला लिया। इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्यसमाज के प्रति बिस्मिल की अगाध श्रद्धा थी।

एक घटना ने बिस्मिल को महान् क्रान्तिकारी बना दिया। यह घटना आर्यसमाज के यशस्वी विद्वान् लेखक भाई परमानन्द जी से जुड़ी हुई है। इस घटना ने बिस्मिल के जीवन की धारा बदल दिया। भाई परमानन्द जी को सन् 1916 ई० में एक षड्यन्त्र के तहत अंग्रेजी सरकार ने फांसी की सजा सुना दी। इस घटना को देखते हुए स्वयं बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में लिखा है—

भाई परमानन्द जी की फांसी की सजा की खबर पढ़कर मेरे शरीर में आग लग गई। मैंने विचार किया ये अंग्रेज बड़े अत्याचारी हैं, जो इतने बड़े महानुभाव को भी फांसी की सजा का हुक्म दे दिया। मैंने प्रतिज्ञा की कि इसका बदला अवश्य लूंगा। जीवन भर अंग्रेजी राज्य का विध्वंस करता रहूँगा।

स्वामी सोमदेव जी को जब बिस्मिल की प्रतिज्ञा का बोध हुआ तो वे बोले—**बिस्मिल! प्रतिज्ञा करनी तो आसान होती है, उसे पूरा करना अति कठिन होता है।** मैंने स्वामी जी को प्रणाम करके कहा यदि आपका आशीर्वाद रहा तो प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूंगा। स्वामी सोमदेव जी ने मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। उसी दिन से मेरे जीवन में क्रान्तिकारी सूत्रपात हुआ। सचमुच मेरे जीवन में जो कुछ भी धार्मिक तथा आध्यात्मिक दृढ़ता उत्पन्न हुई है वह सभी कुछ स्वामी सोमदेव जी के सदुपदेश और आर्यसमाज के सिद्धान्तों तथा सत्यार्थ प्रकाश के पढ़ने के कारण ही हुई है।

क्रान्तिकारियों के मुख्य कार्यों में काकोरी काण्ड की प्रमुखता मानी गई है। सम्पूर्ण संयुक्त प्रान्त का एक विशाल क्रान्तिकारी संगठन बनाया गया था जिसका नेतृत्व बिस्मिल किया करते थे। अंग्रेजों के विरुद्ध में यह दल बहुत अच्छा काम कर रहा था। परन्तु कुछ दिनों के बाद धन के अभाव में अनेक समस्याएं आने लगी। क्रान्तिकारी गतिविधियों को आगे बढ़ाने के लिए हथियारों की आवश्यकता थी जो धन से प्राप्त हो सकते थे। अतः इस दल ने सरकारी खजाने को लूटने का निर्णय लिया। निर्णय के अनुसार सहारनपुर से लखनऊ जाने वाली रेल से अंग्रेजी खजाने को बड़े ही सुनियोजित ढंग से लूट लिया। इस कार्य में 90 क्रान्तिकारियों ने भाग लिया था। यह काम काकोरी स्टेशन पर किया गया जिसके कारण इस घटना का नाम काकोरी कांड दिया गया।

इस घटना से अंग्रेजी सरकार बौखला उठी। जगह-जगह बड़े पैमाने पर छापेमारी होने लगी और क्रान्तिकारियों की छानबीन होने लगी। एक आदमी ने अंग्रेज सरकार को बिस्मिल का भेद दे दिया। यह आदमी बिस्मिल का अंतरंग व्यक्तियों में था, उसने बहुत ही धोखा दिया। परिणाम स्वरूप एक दिन प्रातः जब वे शौच सन्ध्या, व्यायाम आदि से निवृत्त हुए तभी पुलिस ने इन्हें गिरफ्तार कर लिया और गोरखपुर की जेल में बन्द कर दिया। जेल में बड़ी घोर यातनाएं दी गईं। झूठा अभियोग चलाया गया और फांसी की सजा सुना दी गई। 19 दिसम्बर सन् 1927 को गोरखपुर की जेल में रामप्रसाद बिस्मिल को फांसी दी गई।

जब बिस्मिल से अन्तिम इच्छा पूछी गई तो उन्होंने कहा-**अंग्रेजी**

क्रमशः पृष्ठ 8 पर...

www.thearyasamaj.org

पुनर्जन्म एवं कार्य-कारण सिद्धान्त

❑ महात्मा चैतन्यमुनि

जन्म और मृत्यु की पहेली जन-साधारण को ही नहीं बल्कि बुद्धिजीवियों के लिए भी सदा से ही एक विचारणीय विषय रहा है। कुछ लोगों का मानना है कि व्यक्ति संसार में पैदा होता है और मरने के बाद पूरा किस्सा ही समाप्त हो जाता है मगर कुछ का मानना है कि शरीर के मरने के बाद भी जीवात्मा का अस्तित्व बना रहता है और उसके द्वारा किये गये कर्मों के आधार पर उसका पुनर्जन्म होता है। कठोपनिषद् में एक युवक नचिकेता इसी रहस्य को यमाचार्य से जानने की जिज्ञासा करते हुए कहता है—**येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्येऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके। एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्ववयाहं वराणामेष वरस्तृतीयः॥** (कठो० उप० 1-20) मनुष्य के मर जाने पर जो जिज्ञासा रहती है, कोई कहते हैं मरने पर भी मनुष्य बना रहता है, कोई कहते हैं नहीं बना रहता—आपसे शिक्षा पाकर मैं इसका समाधान जानना चाहता हूँ। मैंने जो वर मांगने हैं उनमें तीसरा वर यही है। पहले तो यमाचार्य उस नचिकेता की अनेक प्रकार की परीक्षा लेते हैं मगर बाद में आगे चलकर आत्मा की अमरता का सन्देश देते हुए कहते हैं—**न जायते म्रियते वा विपश्चिच्छन्नाय कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्माने शरीरे॥** (कठो० उप० 2-18) यह चेतन जीव न उत्पन्न होता है, न मरता है, न किसी कारण से उत्पन्न हुआ है, न पहले कभी हुआ था। यह अजन्मा है, नित्य है, निरन्तर है, पुरातन है—शरीर के मरने पर भी यह नहीं मरता।

साधारण व्यक्ति के मन में यह बात उतरती नहीं है, क्योंकि भले ही वेद, उननिषद् तथा गीता आदि ग्रन्थों में आत्मा को अजन्मा और अनादि कहा गया है मगर लोगों का कहना है कि वे व्यक्ति का जन्म और मृत्यु होते हुए प्रतिदिन देखते हैं, इसलिए जन्म-मृत्यु की पहेली तो फिर भी बनी ही रहती है। वास्तविकता यह है कि आत्मा तो अजर व अमर ही है मगर जन्म और मृत्यु हमारे शरीर की होती है। आत्मा के संयोग से शरीर का जन्म और वियोग से शरीर की मृत्यु होती है। इस प्रकार शरीर का ही निर्माण होता है और नाश भी शरीर का ही होता है। हम कह सकते हैं कि "जिसमें किसी शरीर के साथ संयुक्त होके जीव कर्म करने में समर्थ होता है, उसे 'जन्म' कहते हैं और जिस शरीर को प्राप्त होकर जीव क्रिया करता है, उस शरीर और जीव का किसी काल में जो वियोग हो जाना है, उसको 'मरण' कहते हैं।"

वेदादि सत्य शास्त्रों में पुनर्जन्म की बात को स्वीकारा है अत: इस व्यवस्था को न मानने वाले नास्तिक कहे जायेंगे, क्योंकि मनु जी ने कहा है-**नास्तिको वेदनिन्दकः** अर्थात् वेद को न मानने वाले नासितक हैं। पाणिनि के अनुसार-"जिस विषय में किसी व्यक्ति का विचार उस विषय को स्वीकार करने में है, तो उस विषय की दृष्टि से वह आस्तिक कहा जायेगा। यदि व्यक्ति का विचार विषय को अस्वीकार करने में है तो वह नास्तिक होगा।" उनका कथन है—**'अस्ति मतिरस्य, आस्तिकः। नास्ति मतिरस्य नास्तिकः। न च मतिसत्ता-मात्रे प्रत्यय इष्यते, किं तर्हि परलोकोऽस्तीति यस्य मतिरस्ति स आस्तिकः। तद्विपरीतो नास्तिकः।'** अर्थात् जो परलोक अर्थात् पुनर्जन्म को स्वीकार करता है, वह आस्तिक तथा जो ऐसा नहीं मानता वह नास्तिक है। इस अर्थ को ऐसे भी कहा जा सकता है-जो आत्मा को देह आदि के अतिरिक्त मानकर नित्य सदा विद्यमान रहने वाला स्वीकार करता है वह आस्तिक तथा जो ऐसा नहीं मानता, वह नास्तिक है।

अब विचारणीय यह है कि जब आत्मा का देह से अतिरिक्त अस्तित्व है तो देह के छूट जाने के बाद उस आत्मा का क्या होता है? अन्तत: यही बात स्वीकार करनी होगी कि जन्म भी शरीर का होता है और मृत्यु भी शरीर की ही होती है। अत: आत्मा अपने कर्मों के अनुसार अनेक गतियों को प्राप्त होता रहता है तथा इसे ही आवागमन या पुनर्जन्म कहा जाता है। यहां यह बात भी मनन करने योग्य है कि पुनर्जन्म आत्मा का नहीं होता बल्कि कर्मानुसार उस आत्मा को अन्य-अन्य शरीर मिलते रहते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी आत्मा को अमर मानना जरूरी बन जाता है, क्योंकि वैज्ञानिकों द्वारा 'ऊर्जा संरक्षण' सिद्धान्त के आधार पर इस बात को सिद्ध किया जा चुका है कि किसी भी वस्तु का कभी नाश नहीं होता है बल्कि वह अपना स्वरूप बदलती है। कपड़ा भले ही घिस-घिसकर धूल बन जाएगा मगर पदार्थ उतने का उतना ही रहेगा, वह नष्ट नहीं होगा। यदि वैज्ञानिक भौतिक जगत् में इस सिद्धान्त को सत्य मानते हैं तो आध्यात्मिक जगत् में भी इस सिद्धान्त को सत्य माना जाना चाहिए और इस सिद्धान्त के अनुसार-आत्मा उत्पन्न नहीं होता और वर्तमान में उसकी सत्ता है तो आगे यह अपना रूप ही बदल सकता है सभी नष्ट नहीं हो सकता। आत्मा का शरीर से अलग अस्तित्व है तथा शरीर के पैदा होने से पूर्व और मरने के बाद भी इसका अस्तित्व बना रहता है। अत: इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि यह कहीं आता है और कहीं चला जाता है। इसे ही इसका रूप बदलना कहा जा सकता है और यही पुनर्जन्म है।

पुनर्जन्म के पक्ष में अनेक हेतु दिए जा सकते हैं जैसे आत्मा नित्य है इसलिए इसका नाश नहीं हो सकता। वेद, उपनिषद्, मनुस्मृति, दर्शन, गीता आदि ग्रन्थ इस बात का अनुमोदन करते हैं। कर्मफल व्यवस्था के आधार पर भी पुनर्जन्म सिद्ध होता है। परमात्मा की न्यायव्यवस्था और शक्तिमत्ता से भी पुनर्जन्म की पुष्टि होती है। जीव की क्रमिक उन्नति का आधार भी पुनर्जन्म ही है। कार्य-कारण सिद्धान्त से भी पुनर्जन्म की सिद्धि होती है। किसी भी घटना या उत्पन्न हुई स्थिति का कोई न कोई कारण होता है और कारण सदा कार्य से पूर्व होता है। हम संसार में जीवों के विकास आदि की अनेक प्रकार की जो विभिन्नताएं पाते हैं उनके पीछे कोई न कोई तो कारण मानना ही पड़ेगा। कारण वंशानुगत भी हो सकता है, वातावरण का प्रभाव भी हो सकता है और पिछले जन्म के संस्कार भी हो सकते हैं। वंशानुगत और वातावरण को पूरी तरह से इसका कारण नहीं माना जा सकता है क्योंकि विद्वान् मां-बाप के यहां अविद्वान् संतान भी देखी जा सकती हैं, वातावरण के प्रभाव को ही कारण माने तो भी उपयुक्त नहीं क्योंकि एक जैसे वातावरण में भी विकास की अलग-अलग प्रक्रियाएं देखी जा सकती हैं। हां, केवल पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानने से ही इस शंका का समाधान समीचीन रूप से हो सकता है। भौतिक जगत् में जिसे कार्य-कारण सिद्धान्त कहते हैं, आध्यात्मिक क्षेत्र में उसी को कर्म-सिद्धान्त कहा जाता है। कर्म कारण है और फल उसका कार्य है। इसलिए किए हुए कर्म के फल से बचा नहीं जा सकता है और उस फल को भोगने के लिए ही पुनर्जन्म को मानना अनिवार्य है।

कई लोग प्रश्न करते हैं कि जो कारण के बिना कार्य नहीं होता, तो कारण का कारण कौन है? इस सम्बन्ध में सृष्टि निर्माण के प्रयोजन को लेकर महर्षि दयानन्द जी लिखते (आठवां समुल्लास) हैं—जो केवल कारणरूप ही हैं, वे कार्य किसी के नहीं होते और जो किसी का कारण और किसी का कार्य होता है, वह दूसरा (अर्थात् प्रकृति-विकृति) कहाता है। जैसे पृथ्वी घर आदि का कारण और जल आदि का कार्य होता है। परन्तु जो आदि कारण प्रकृति है, वह अनादि है। **मूले मूलाभावादमूलं मूलम्।** (सांख्य० 1.67) मूल का मूल अर्थात् कारण का कारण नहीं होता। इससे अकारण सब कार्यों का कारण होता है, क्योंकि किसी कार्य के आरम्भ के समय के पूर्व तीनों कारण अवश्य होते हैं। जैसे कपड़े बनाने के पूर्व तन्तुवाय, रूई का सूत और नलिका आदि पूर्व वर्तमान होने से वस्त्र बनता है, जैसे जगत् की उत्पत्ति के पूर्व परमेश्वर प्रकृति काल और आकाश तथा जीवों के अनादि होने से इस जगत् की उत्पत्ति होती है। यदि इनमें से एक भी न हो तो जगत् भी न हो। पुनर्जन्म के प्रसंग में हम इस कथन की इस प्रकार से संगति बिठा सकते हैं कि जीव प्रकृति के संपर्क में आकर कर्म करता है और परमात्मा उस कर्म के अनुसार ही फल देकर जीव को अनेक प्रकार की योनियां (शरीर) और सुख-दु:ख देता है। इसी क्रम में वे कहते हैं-"अरे भोले भाइयो! कुछ अपनी बुद्धि को काम में क्यों नहीं लाते? देखो, संसार में दो ही पदार्थ होते हैं-एक कारण दूसरा कार्य। जो कारण है वह कार्य नहीं और जिस समय कार्य है वह कारण नहीं। जब तक मनुष्य सृष्टि को यथावत् नहीं समझता, तब तक उसको यथावत् ज्ञान प्राप्त नहीं होता। ....भला जो प्रथम संयोग में

क्रमशः पृष्ठ 6 पर.....

www.thearyasamaj.org

स्वास्थ्य-चर्चा... जल चिकित्सा : एक चमत्कार

गतांक से आगे....

यदि चोट लगने या कटने से खून आ जाए तो टिटनेस का इंजेक्शन लगवाने के बाद ठण्डे जल की पट्टी लगायें या बर्फ की सेंक करें।

गरम जल का लाभ वात रोगों, जोड़ों का दर्द, कमर दर्द, घुटने का दर्द, गठिया, कंधे की जकड़न में होता है, इससे गर्म जल या भाप का सेंक दिया जाता है।

यदि रात में नींद नहीं आती तो सोने से पहले दोनों पैरों को घुटनों तक सहने योग्य गरम जल से भरी बाल्टी या टब में पन्द्रह मिनट डुबाए रखें, इसके बाद पैरों को बाहर निकालकर पोंछ लें और सो जाएं, नींद आ जाएगी। यह ध्यान रखें कि जब गरम पानी में पैर डुबायें, तब सिर पर ठण्डे पानी में भिगोकर निचोड़ा हुआ तौलिया अवश्य रखें।

रात में गरम जल बढ़ी आयु नष्ट होती है, जिससे अनावश्यक रूप से बढ़ी हुई चर्बी आदि से सहज ही मुक्ति मिल जाती है तथा पेट, जांघों आदि

❑ आयुर्वेदशिरोमणि डॉ. मनोहरदास अग्रावत एन.डी.

पर चर्बी जमना बन्द हो जाता है। अजीर्ण, अपच, अफारा, कब्ज इत्यादि उदर विकार जैसे बलगम बनना, कॉलेस्टॉल (एल.डी.एल.) बढ़ना, नजला बना रहना, सिरदर्द होना जैसे विकारों से मुक्ति मिलती है, नियमित रूप से गरम जल रात में पीते रहना चाहिए।

उबालकर ठण्डा किए पानी को पीने से वायु गोला, बवासीर (पाइल्स), क्षय, उदररोग (एसाइटिस), सूजन, पेट की अग्नि की मन्दता, बुखार, विविध नेत्र रोग, वायु रोग, भोजन के प्रति रुचि न होना, अतिसार (डायरिया), नजला, जुकाम इत्यादि बीमारियाँ दूर होती हैं।

गरम जल पीने से आमाशय और आंतों में गति पैदा होती है। फलस्वरूप पेट में रुका हुआ आहार आंतों में जाकर पच जाता है। चरक संहिता के अनुसार वायु-कफ जनित और वात जनित ज्वर में प्यास लगने पर उष्ण जल दिया जाना चाहिए। ज्वर में गरम जल पिलाने की बड़ी महिमा है। इससे रोगी की पेट और आंतों की बढ़ी हुई वायु सुगमता पूर्वक खारिज हो जाती है, पिया गया जल हल्का होने के कारण शीघ्र पच जाता है, अल्प मात्रा में पिया गया जल प्यास को शान्त करता है, जठराग्नि प्रज्वलित होती है और कफ आसानी से सूख जाता है, बुखार की उस अवस्था में जब रोगी के शरीर में जलन हो रही हो, चक्कर आ रहे हों, रोगी अंट-शंट बोल रहा हो, तो गरम जल नहीं दिया जाना चाहिए, क्योंकि गरम जल से ये लक्षण बढ़ने लगते हैं, गरमी (पित्त) के कारण होने वाले दस्तों में भी गरम जल वर्जित है। दिन में उबला जल रखे-रखे ही रात को भारी हो जाता है, इसी प्रकार रात के समय उबला जल रात और रात का उबला हुआ जल दिन में नहीं पीना चाहिए। सदा ताजा उबालकर ठण्डा किया हुआ जल ही पीएं।

भोजन के बाद एक गिलास गरम जल पीने से मोटापा कम होता है, शरीर संतुलित स्वस्थ एवं सबल होने लगता है, गर्मियों में यह प्रयोग न करें।

जिस जल में ईंट के टुकड़े को आग में गरम करके बुझाया गया हो, वह जल शरीर के समस्त रोगों का हरण करता है। जल शरीर की समस्त जैविक क्रियाओं के लिए प्रत्यक्षत: जिम्मेवार होता है, जीवन के लिए जरूरी आधार भूत पोषक तत्त्वों का वाहक भी जल ही होता है, इतना ही नहीं, जल शरीर के तापमान को नियंत्रित रखने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है, शरीर से जल का निकास मुख्य रूप से पसीने और मूत्र विसर्जन आदि के रूप में होता है, लिहाजा शरीर से निकास की आवश्यक मात्रा को बनाए रखने के लिए जल का भरपूर सेवन अत्यावश्यक है।

-मनोहर आश्रम, उम्मैदपुरा, पो. तारापुर (जावद) 458330, जिला नीमच (म.प्र.) (साभार-वैदिक सार्वदेशिक)

विकार दूर करती है सोंठ

अदरक का छिलका हटाकर सुखा लेने पर सोंठ बन जाती है। इसका लैटिन नाम जिंजीबर आफीसिनेल है। सोंठ को श्रेष्ठ औषधि अर्थात् अनेक विकारों को दूर करने वाली कहा गया है। यह कफ तथा वात रोगों में विशेष लाभकारी है।

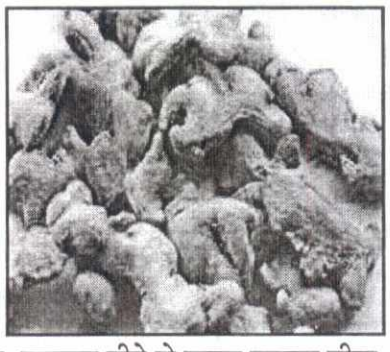

- सोंठ, गुड़, घी तथा थोड़ा पानी मिलाकर पकाकर चटनी बना लें। पांच-पांच ग्राम (एक टीस्पून) सुबह-शाम लेने से सर्दी-जुकाम ठीक होता है।
- 10 ग्राम सोंठ 250 ग्राम पानी में पकायें। चौथाई शेष रह जाने पर, छानकर पीने से पुराना जुकाम ठीक होता है।
- सोंठ, छोटी हरड़ तथा नागरमोथा को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बना लें। इस मात्रा का दोगुणा गुड़ डालकर गोली बना लें। इन गोलियों को चूसने से खांसी तथा श्वांस में आराम मिलता है।
- सोंठ तथा गुड़ पांच-पांच ग्राम मिला लें। सुबह, दोपहर, शाम लेने से पीलिया में लाभ होता है।
- सोंठ, आंवला तथा मिश्री समान मात्रा में समान मात्रा में लेकर चूर्ण बना लें, पांच-पांच ग्राम भोजन के बाद लेने से 'अम्लपित्त' में लाभ होता है।
- सोंठ तथा भुने जीरा का चूर्ण, उबली गाजर के साथ खाने से कोलाइटिस में फायदा होता है।
- सोंठ तथा बायविडंग के चूर्ण की समान मात्रा एक-एक टीस्पून सुबह-शाम शहद के साथ लेने से पेट के कीड़े दूर होते हैं।
- पांच से दस ग्राम सोंठ के चूर्ण को गोमूत्र अथवा गर्म पानी के साथ पीने से फाइलेरिया में लाभ होता है।

—डॉ. सतीश चन्द्र शुक्ल

रसोई-घर से संबंधित कुछ खास बातें

आपकी रसोई सुरक्षित रहे, इसके लिए नीचे दिए गए सुझावों पर अमल करें ताकि लापरवाही के कारण होने वाली दुर्घटनाओं से बचा जा सके—

- किचन में टोस्टर, मिक्सी, फ्रिज, बिजली का छोटा पंखा आदि बिजली से चलने वाले सामान को एक साथ व पास-पास न रखें।
- गैस के पास स्टोव कदापि न जलायें।
- गैस के आस-पास मिट्टी का तैल न रखें।
- जगह की कमी होने के कारण रसोई में बहुत अधिक सामान रख दिया जाता है, फिर भी गैस चूल्हे को स्टैंड के ऊपर व सिलैंडर को नीचे रखना चाहिए।
- भोजन बनाते समय यदि कालबैल बजे या पोस्टमैन, धोबी या दूधवाला आया हो तब गैस बन्द करके ही शान्ति से बाहर आयें, हड़बड़ाहट में कार्य न करें।
- पूरे घर में बिजली फिटिंग को वर्ष में एक बार चैक अवश्य कर लें।
- जो बर्तन प्रतिदिन प्रयोग में आते हों उन्हें ही बाहर रखें, अन्य सभी बर्तनों को ड्रम में भरकर रखें।

—छैल बिहारी शर्मा 'इन्द्र', म०नं० 784/64, शिव सदन, छाता, मथुरा (उ.प्र.)

अनमोल वचन

- दरिद्रता, शारीरिक और मानसिक व्याधि, दु:ख-बन्धन तथा व्यसन, ये सब मनुष्यों के अपने ही अधर्म और पापरूपी वृक्ष के फल हैं।
- धर्म कथा सुनने के समय, श्मशान भूमि में जाने पर, रोगग्रस्त अवस्था में संसार की नश्वरता की जो सोच उपजती है, वह सोच आगे भी स्थिर रहे, तो इस सांसारिक बंधन से कौन नहीं छुटकारा पा सकता।
- दान देना, तपस्वी होना, शूरवीर होना, विज्ञानी, विनयी और नीतिवान् होने का अभिमान नहीं करना चाहिए क्योंकि एक से बढ़कर एक इस धरती पर दानी, तपस्वी, ज्ञानी, विज्ञानी, नीतिवान् आदि लोग मौजूद हैं।

www.thearyasamaj.org

सत्यार्थप्रकाश प्रश्नोत्तरी

नवम समुल्लास के प्रश्नोत्तर

❑ कन्हैयालाल आर्य, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा

गतांक से आगे....

जब शरीर से निकलता है, उसी का नाम 'मृत्यु' और संयोग होने का नाम 'जन्म' है। जब शरीर छोड़ता है तब 'यमालय' अर्थात् आकाशस्थ वायु में रहता है। परमेश्वर उस जीव को पापपुण्यानुसार जन्म देता है। वह वायु, अन्न, जल अथवा शरीर के छिद्र द्वारा दूसरे के शरीर में ईश्वर की प्रेरणा से प्रविष्ट होता है। जो प्रविष्ट होकर क्रमशः वीर्य में जा, गर्भ में स्थित हो शरीर धारण कर बाहर आता है। जो स्त्री का शरीर धारण करने योग्य कर्म हों तो पुरुष के शरीर में प्रवेश करता है और नपुंसक गर्भ की स्थिति स्त्री-पुरुष के शरीर सम्बन्ध के समय रज-वीर्य के बराबर होने से होती है।

प्रश्न 662. जीव मुक्ति को कब प्राप्त करता है?

उत्तर-नाना प्रकार के जन्म-मरण में तब तक जीव पड़ा रहता है जब तक कि उत्तम कर्मोपासना, ज्ञान को करके मुक्ति को नहीं पाता, क्योंकि उत्तम जन्म और मुक्ति में महाकल्प-पर्यन्त जन्म-मरण दुःखों से रहित होकर आनन्द में रहता है।

प्रश्न 663. मुक्ति एक जन्म में होती है वा अनेक जन्मों में?

उत्तर-अनेक जन्मों में? जब इस जीव के हृदय की अविद्या अज्ञानरूपी गांठ कट जाती, सब संशय छिन्न-भिन्न हो जाते और दुष्ट कर्म क्षय को प्राप्त होते हैं, तभी उस परमात्मा में, जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, निवास करता है।

प्रश्न 664. मुक्ति में परमेश्वर में जीव मिल जाता है वा पृथक् रहता है?

उत्तर-पृथक् रहता है, क्योंकि जो मिल जाये तो मुक्ति का सुख कौन भोगे और मुक्ति के जितने साधन हैं, वे निष्फल हो जाये। वह मुक्ति तो नहीं जीव का प्रलय मानना चाहिए। जो जीव परमेश्वर की आज्ञापालन, उत्तम कर्म, सत्संग-योगाभ्यास आदि सब साधन करता है वही मुक्ति को पाता है।

प्रश्न 665. जैसे शरीर के बिना सांसारिक सुख नहीं भोग सकता, वैसे मुक्ति में बिना शरीर आनन्द को कैसे भोग सकेगा?

उत्तर-सांसारिक सुख भौतिक शरीर के साथ भोगे जाते हैं, परन्तु मुक्ति का सुख अभौतिक शरीर, जिसे सूक्ष्म शरीर कहा जाता है, उसके द्वारा भोगा जाता है। पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच सूक्ष्मभूत और मन तथा बुद्धि इन 17 तत्त्वों का समुदाय सूक्ष्म शरीर है। यह सूक्ष्म शरीर जन्म-मरणादि में जीव के साथ रहता है। इसी से जीव मुक्ति में सुख को भोगता है।

प्रश्न 666. स्वर्ग और नरक क्या है?

उत्तर-यही 'सुख' विशेष 'स्वर्ग' और विषय तृष्णा में फँसकर 'दुःख' विशेष भोग करना 'नरक' कहाता है। जो सांसारिक सुख है वह सामान्य वर्ग और परमेश्वर की प्राप्ति से जो आनन्द है, वही विशेष स्वर्ग कहाता है।

सब जीव स्वभाव से सुख-प्राप्ति की इच्छा और दुःख का वियोग होना चाहते हैं, परन्तु जब तक धर्म नहीं करते और पाप नहीं छोड़ते तब तक उनको सुख का मिलना और दुःख का छूटना न होगा।

प्रश्न 667. शरीर, वाणी और मन से किए हुए कर्मों का कैसा फल होता है? **उत्तर**-जो नर शरीर से चोरी, परस्त्री-गमन, श्रेष्ठों को मारने आदि दुष्ट कर्म करता है, उसको वृक्षादि स्थावर का जन्म मिलता है। वाणी से किये पाप-कर्मों से पक्षी और मृगादि का तथा मन से किए दुष्ट कर्मों से चाण्डाल आदि का शरीर मिलता है।

प्रश्न 668. सत्त्वगुण, तमोगुण, रजोगुण की क्या पहचान है?

उत्तर-जब आत्मा में ज्ञान रहे तब सत्त्वगुण, जब अज्ञान रहे तब तमोगुण और जब राग-द्वेष में आत्मा लगे तो तब रजोगुण जानना चाहिए। क्रमशः

'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक की सदस्यता ग्रहण कर तथा धार्मिक एवं सामाजिक आयोजनों में 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' को सहयोग राशि भेजकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनिये।
सम्पर्क-01262-216222, मो० 08901387993

अजीब पहेली

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य

गतांक से आगे....

महात्मा जी ने सभी श्रोताओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए कहा कि जब पूर्व पक्ष अधूरे हैं तो यह विचारना और भी आवश्यक हो जाता है कि हमारे सम्बन्धों का आधार क्या है? इस गुत्थी का रहस्य बहुत कुछ जन्म शब्द के स्वारस्य में अन्तर्निहित है, क्योंकि किसी के जन्म के साथ ही उसके पारस्परिक सम्बन्ध प्रकाश में आते हैं। अतः नित्य आत्मा का किसी शरीर, इन्द्रिय, बुद्धि आदि से जुड़ना ही उसका जन्म है और पूर्व प्राप्त शरीर आदि से अलग होना ही मृत्यु है अर्थात् आत्मा और शरीर आदि के सम्बन्ध-असम्बन्ध का नाम ही जन्म और मृत्यु है। वस्तुतः आत्मा और शरीर आदि के सम्बन्ध से ही हमारे पारस्परिक सम्बन्ध हैं, क्योंकि जब तक यह सम्बन्ध रहता है, तभी तक उस सम्बन्ध से हमारे वे-वे सम्बन्ध जुड़े रहते हैं। आत्मा और शरीरादि का सम्बन्ध टूटते ही उस सम्बन्ध से जुड़े हुए सम्बन्धियों के सम्बन्ध भी तब स्वतः टूट जाते हैं।

सम्भवतः इसी रहस्य को समझाने के लिए कभी यह रिवाज चला होगा कि श्मशान भूमि से कुछ पूर्व निश्चित स्थान पर मृतक को रखकर उसके चारों ओर जल छिड़कने के बाद सिरके समीप घट को पटक देते हैं। जिसका अभिप्राय यही है कि जैसे जब तक घट के हिस्से आपस में जुड़े हुए थे, तभी तक ही घट से कोई भी व्यवहार हो नहीं सकता। ठीक ऐसे ही जब तक शरीरादि और आत्मा का सम्बन्ध रहता है, तभी तक सारे सम्बन्ध जुड़े रहते हैं और इस सम्बन्ध के टूटते ही सभी सांसारिक सम्बन्ध तब स्वतः टूट जाते हैं। इसी को स्मरण कराने के लिए कुछ श्मशान भूमि से लौटते हुए एक स्थान पर बैठकर भूमि से तिनके लेते हैं और तब खड़े होकर और फिर उन तिनकों को तोड़कर अपने पीछे फैंक देते हैं जिसका भाव यही है कि इससे हमारा जो सम्बन्ध जुड़ा था, वह अब टूट गया।

'रिश्ते नाते तोड़ चला यह।'

छठी बैठक

आत्मा का अस्तित्व-आज की बैठक का आरम्भ संगीतप्रिय जी ने अपने गीतों से किया और प्रथम में संसार के अद्भुत रूप का चित्रण किया और दूसरे में आत्मा की चर्चा की। इसी चर्चा को आगे बढ़ाते हुए महात्मा जी ने कहा हम प्रति दिन अपने व्यवहार की सिद्धि के लिए शरीर, मन और आत्मा का उपयोग करते हैं। शरीर ज्ञान तथा कर्म-इन्द्रियों का समुच्चय है। बाह्य इन्द्रियों की तरह आन्तरिक व्यवहारों अर्थात् सोचने आदि के लिए जो साधन हैं। उनको ही अन्तःकरण चतुष्टय कहते हैं। कई बार सारा अन्तःकरण केवल किसी एक नाम से भी पुकारा जाता है। शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण जिसकी चेतना, प्रेरणा से कार्य करते हैं, वही आत्मा है। जैसे कि बिजली से पंखे, बल्ब-ट्यूब, अन्य यन्त्र आदि कार्य करते हैं। यही आत्मा ही हमारे शरीर और मन का अधिष्ठाता, नेता, संचालक और सर्वेसर्वा है। बृहदारण्यक उपनिषद् (2, 4 और पुनः 4, 5) में एक आख्यान आता है। जिसमें महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रेयी को आत्मतत्त्व की ओर आकर्षित करते हुए आत्मा के लिए अमृत शब्द का संकेत करते हैं और जोर देकर कहते हैं कि उसी को देखना, सुनना, समझना चाहिए तभी अध्यात्म सम्बन्धी सारी गाठें, जिज्ञासाएं शान्त होती हैं। भारतीय दर्शनों में शरीर में रहने वाले आत्मा की सत्ता पर विचार करते हुए बताया कि चेतन-नित्य और ज्ञानवान आत्मा शरीर, इन्द्रिय और मन से बिल्कुल भिन्न है। वैशेषिक दर्शन के प्राचीन व्याख्याता प्रशस्तदेव ने अनेक उदाहरणों से आत्मा की सत्ता और स्वरूप का स्पष्टीकरण किया है जिससे सिद्ध होता है कि आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता है और वह ही शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण का नियामक तथा अधिष्ठाता है।

जैसे कि एक कारीगर अपने औजारों की सहायता से अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करता है। ऐसे ही शरीर में रहने वाला ज्ञानवान आत्मा इन्द्रियों को औजारों की तरह बर्त कर अपनी इच्छित कार्य को साधता है।

जैसे किसी यान यन्त्र का चालक प्रिय की प्राप्ति और अप्रिय से निवृत्ति के लिए इच्छित दिशा में यान को चलाता है। ऐसे ही प्रत्येक देह का चेतन चालक (आत्मा) अपने कार्य की सिद्धि के लिए शरीर रूपी यान को चलाता हुआ प्रतीत होता है। क्रमशः

पुनर्जन्म एवं कार्य-कारण.... पृष्ठ 3 का शेष......

मिलने और मिलाने वाला पदार्थ है, जो संयोग का आदि और वियोग का अन्त अर्थात् जिसका विभाग नहीं हो सकता, उसको 'कारण' कहते हैं और जो संयोग के पीछे बनता और वियोग के पश्चात् वैसा नहीं रहता वह 'कार्य' कहाता है। जो उस समय का कारण, कार्य का कार्य, कर्त्ता का कर्त्ता, साधन का साधन और साध्य का साध्य कहता है वह देखता अन्धा सुनता बहिरा और जानता हुआ मूढ़ है। क्या आंख की आंख, दीपक का दीपक और सूर्य का सूर्य कभी हो सकता है? जो जिससे उत्पन्न होता है वह 'कारण' और जो उत्पन्न होता है वह 'कार्य' और जो कारण को कार्यरूप बनानेहारा है, वह कर्त्ता कहाता है।''

प्रश्न यह भी उठाया जाता है कि बिना निमित्त के पदार्थों की उत्पत्ति होती है। जैसा (कि) बबूल आदि वृक्षों के कांटे तीक्ष्ण अणिवाले देखने मेंआते हैं। इससे विदित होता है कि जब-जब सृष्टि का आरम्भ होता है तब-तब शरीरादि पदार्थ बिना निमित्त के होते हैं। महर्षि इस प्रश्न का उत्तर देते हैं—''जिससे पदार्थ उत्पन्न होता है, वही उसका निमित्त है। बिना कंटकी वृक्ष के कांटे उत्पन्न क्यों नहीं होते?'' हम यहां पर इसकी संगति इस प्रकार लगा सकते हैं कि जीव के सुख-दुःख व शरीरादि उसके कर्मों का ही फल है...महर्षि जी 'उपदेश मंजरी' (पृ० 37) में इसी बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं—''इस संसार में सुख-दुःख के जो भेद दिखते हैं, उनका कुछ न कुछ कारण अवश्य होना चाहिए। कारण के बिना ये कार्य नहीं हो सकेंगे। इन सुख-दुःख के भेदों के कारण पूर्व जन्म के कर्म हैं। इसलिए शेषवत् अनुमान से सुख-दुःखादि के भेदों की व्यवस्था ठीक-ठीक लग जाती है। अब कर्मों के विषय में कहा जाये तो वे भी विचित्र हैं। नाना प्रकार के आत्मा पर संस्कार होते हैं, उनके कारण नाना प्रकार के मानस कर्म उत्पन्न होते हैं। ईश्वर की ऐसी व्यवस्था है कि उन-उन कर्मों के योग से पाप-पुण्य उत्पन्न होने चाहिएं। इस प्रकार पाप-पुण्य का हिस्सा बिना भोगे छुटकारा नहीं होता, पापों को भोगना ही पड़ता है, वे कभी भी नहीं छूटते।''

इस सम्बन्ध में बरेली में स्कॉट महाशय के साथ हुए संवाद में महर्षि जी (श्रीमद्दयानन्दप्रकाश : संगठन काण्ड) कहा-''जीव और जीव के स्वाभाविक गुण, कर्म और स्वभाव अनादि हैं। न्यायादि परमेश्वर के गुण भी अनादि हैं। जो मनुष्य जीवन के गुणों की उत्पत्ति मानता है उसे उसका नाश भी मानना पड़ेगा। कारण के बिना कार्य का होना असंभव है, इसलिए उसे सिद्ध करना होगा कि सत्य का कारण क्या है? जीव के शुभाशुभ कर्म प्रवाह से अनादि हैं। उनका यथावत् फल देना ईश्वराधीन है। स्थूल और कारण शरीर के बिना जीव सुख-दुःख का भोग नहीं कर सकता। इसलिए उसका बार-बार देह-धारण करना आवश्यक है। प्रत्येक शरीर में क्रियावान् होने के कारण, जीव नए-नए क्रियमाण, संचित और प्रारब्ध कर्म उत्पन्न करता रहता है। दिन और रात के बार-बार लौट आने से भी प्रत्यक्ष सिद्ध है कि सृष्टि में फिर-फिर आने का नियम विद्यमान है।''

संसार में जो भी विषमताएं हैं उनका कोई न कोई कारण अवश्य ही मानना पड़ेगा। जीवों को जो भी फलादि मिलता है, उसका कारण हमारे पूर्वजन्म के कर्म ही हैं। दर्शनकार (वैशे० 1.2.1,2) ने भी इसी बात की पुष्टि की है तथा चरक का भी यही कथन है-**तेषां कर्मैव कारणम्** (11.13)। नीतिकारों ने भी इस विषमता का कारण जीव के कर्म ही बताया है-**कर्मैव कारणं चात्र सुगतिं दुर्गतिं प्रति**। (शुक्र०नी० 1.37) शुक्रनीति (1.51) में आगे कहा है कि कुछ कारण तो यहां पर स्पष्ट रूप से विदित होते हैं मगर अनेक बार ऐसा भी होता है कि बहुत कुछ सोचने पर भी किसी का कोई सामयिक कारण सामने नहीं आता। अल्पज्ञ होने के कारण व्यक्ति को भले ही उसका कोई स्पष्ट कारण दिखाई न दे मगर वास्तव में वह उसके अपने ही पूर्वकृत कर्मों का फल होता है.....निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि संसार में जितनी भी विभिन्नताएं हैं उसके पीछे कोई न कोई कारण अवश्य है, जीवों की सामर्थ्य आदि में भी जो विभिन्नताएं हैं उसके पीछे भी कोई न कोई कारण अवश्य ही मानना होगा। भौतिक जगत् में जिसे हम '**कार्य-कारण सिद्धान्त**' कहते हैं, आध्यात्मिक जगत् में वही '**कर्म-फल सिद्धान्त**' है। इस सिद्धान्त की गहराई में जाने पर पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानना अनिवार्य है।

संपर्क-महादेव, सुन्दरनगर-174401, हि०प्र०

आने वाला कल है बेटी

बेटी घर की लाज होती है। माँ-बाप की ताज होती है।
वही आने वाला कल और वही आज होती है।
वही सुखी रखती परिवार,
वही आगे बढ़ाती संसार।
अगर बढ़ाना है आगे वंश,
बेटी को मत समझो दंश।
मन से बेटी का सम्मान करो,
तिरस्कार करने से तुम डरो,
इस बात का भी आज रख लो ध्यान,
रोशन करेगी वह कुल का नाम,
जो यह सोचता है कि बेटा वंश बढ़ाएगा,
वह बिन बेटी के बेटा कहां से लाएगा।
बेटी बिना बेटा रह जायेगा कंवारा,
वंश बढ़ाना दूर, नींव भी न रख पाएगा।
जैसे जल बिन मुश्किल एक-एक पल,
बेटी बिना नहीं रहेगा आने वाला कल।

महाशय भलेराम आर्य

—रोमन नैन, खेदड़, हिसार

संकलनकर्त्ता : भलेराम आर्य, ग्राम सांघी, जिला रोहतक

मै० कुलवन्त पिक्कल स्टोर, शाप नं० 115, मार्किट नं० 1, एन.आई.टी., फरीदाबाद-121001 (हरि०)
मै० मेवाराम हंसराज, किराना मर्चेन्ट, रेलवे रोड, रिवाड़ी-123401 (हरि०)
मै० मोहनसिंह अवतारसिंह, पुरानी मण्डी, करनाल-132001 (हरि०)
मै० ओमप्रकाश सुरिन्द्र कुमार, गुड़ मण्डी, पानीपत-132103 (हरि०)
मै० परमानन्द साईं दित्तामल, रेलवे रोड, रोहतक-124001 (हरि०)
मै० राजाराम रिक्खीराम, पुरानी अनाज मण्डी, कैथल-132027 (हरि०)

www.thearyasamaj.org

आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

ईश्वर आनन्द स्वरूप है। उसकी वेदविद्या को जानने वाला, ईश्वर को जानने, मानने वाला, उसकी उपासना करने वाला भी आनन्द में रहता है। इसीलिए तो कवि ऋषि दयानन्द को आनन्दकन्द कहते हैं। जो लोग ईर्ष्या, द्वेष, छल, कपट, लोभ, मोह, भय, शोक, अज्ञान, अविद्या से भरे होते हैं, वे ही दूसरों को दु:ख पहुंचाने की चेष्टा करते रहते हैं। हैरानी की बात! ऐसे लोगों को कोई दूसरा दु:खी भी नहीं करता, अपितु वे अपने उपरोक्त दुर्गुणों के कारण स्वयं अपना दु:ख पाले रहते हैं तथा दूसरों को भी दु:खी करने की चेष्टा करते रहते हैं।

दूसरी ओर हमारे आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द जो दु:ख पहुंचाने वाले को भी दु:ख नहीं देते, यह कहना उनके स्वभाव में ही नहीं है। माँझी व नाई द्वारा दी रोटी आनन्द में खाते हैं। रास्ते में दुर्वचन कहने वाले सद्धू नामक व्यक्ति की ओर मुस्कुराकर देखते हैं और जब वह उनके स्थल पर आकर उन्हें गालियां देता है तब भी प्रेम भरे शब्दों में उसका स्वागत करते हैं। ऋषि जी एक स्थान पर जल में पैर लटकाए बैठे हैं। कुछ शरारती लड़के रेत के गोले बनाकर उन पर मारना आरम्भ करते हैं। ऋषि चुपचाप सहन करते हैं। अन्त में जब रेत उनकी आंख में घुसने लगती है तो वहां से उठकर अन्यत्र चले जाते हैं, लड़कों को कुछ नहीं कहते।

काशी शास्त्रार्थ में अविद्या, अंधविश्वास के गढ़ को नींव से उखड़ता देखकर पण्डित लोग पूर्व नियोजित योजना के अनुसार भारी उपद्रव करवा देते हैं। ऋषि के ऊपर ढेले, गोबर, मिट्टी फेंके जाते हैं। शास्त्रार्थ के मध्य में ही पं० विशुद्धानन्द उनकी पीठ पर हाथ फेरकर उनकी हार की स्वयं ही घोषणा करके ताली बजा देते हैं व अन्य से भी बजवा देते हैं। लोक में अनेक प्रसंगों में आपने दुष्ट वृत्ति के लोगों को इस प्रकार की हरकत करते देखा होगा। इस प्रकार की हरकत पीड़ित व्यक्ति के अन्दर बहुत चिड़चिड़ाहट पैदा करती है। लेकिन ऋषि में तो आनन्द का भण्डार है, वहाँ चिड़चिड़ाहट कहाँ? वे तो मुस्कुराते हुए काशी नरेश से हास्यभाव में मात्र इतना कहते हैं-"राजन्! तोप और नौबत के स्थान पर आपका कर-ताली द्वारा सम्मान किया जा रहा है।" हम दयानन्द के धैर्य, आनन्द पर अपना हृदय लुटाते हैं। इस घटना ने राजा को कितना छोटा व दयानन्द को कितना बड़ा बना दिया। वे सही मायने में पिता हैं। क्या राष्ट्रपिता? नहीं, नहीं, उससे भी बड़े। वे ईश्वर के सच्चे उपासक हैं, अत: उसके गुणों को धारण करने वाले हैं। इसीलिए तो विद्वान् कवि लोग भी उनकी उपमा खोजते ही रहते हैं। ऋषि के आनन्द का पारावार देखिए विष देने वालों को भी कष्ट नहीं पहुंचाते।

ऋषि के अनुयायी विचार करें। क्या वे आज परस्पर एक-दूसरे से ईर्ष्या-द्वेष के कारण दु:खी हैं या संसार के दु:खों को देखकर और उन्हें मिटाने का प्रयास करते हुए कष्ट उठा रहे हैं? ऋषि तो पराए कष्ट की ही तड़प रखते थे, उसे मिटाने के लिए ही पुरुषार्थ करते थे। एक दिन ऋषि बैठे-बैठे लेट जाते हैं। थोड़ी देर में उठकर ठण्डा श्वास भरकर कहते हैं कि विधवाओं और गौओं की आहों से यह देश विनष्ट हुआ है। सायंकाल मेले में घूमते हुए देखते हैं कि लोग अपनी लड़कियों को पण्डों को दान कर रहे हैं। लोगों की इस मूर्खता व पण्डों की धूर्तता को देखकर इतनी वेदना होती है कि भोजन भी नहीं कर पाते।

जो स्वयं ज्ञानपूर्वक आनन्द में है, वही पराई आग में जल सकता है। जो स्वयं के स्वभाव के दुर्गुणों से अपना दु:ख पाले हुए हैं, वह दूसरों का दु:ख ही बढ़ा सकता है, किसी को सुखी क्या करेगा। ठीक ही कहा है—

"आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं, हम कथा सुनाते हैं।"

युगों तक नए-नए आयामों द्वारा यह कथा सुनाई जाती रहेगी।

हम आचार्य बलदेव जैसे साधुओं को नमन करते हैं, जिन्होंने ऋषि के मिशन के अनुकूल अपना जीवन भेंट कर दिया। यह लेख उनकी याद में समर्पित करते हुए आप सबसे उनके निर्वाण दिवस 28 जनवरी 2017 को आचार्य बलदेव स्मृति दिवस पर पहुंचने व अन्य को पहुंचाने की प्रार्थना करते हैं।

आर्यसमाज डबवाली द्वारा आयोजित तीन दिवसीय वार्षिक उत्सव श्रद्धा एवं उल्लास के साथ सम्पन्न

डबवाली (सिरसा)। आर्यसमाज डबवाली द्वारा विगत 16 दिसम्बर (शुक्रवार) से 18 दिसम्बर (रविवार) 2016 तक आयोजित तीन दिवसीय वेदप्रचार उत्सव श्रद्धा व उल्लास के साथ सम्पन्न हुआ जिसमें आर्ष योग आश्रम फरीदाबाद व गुरुकुल गौतम नगर दिल्ली के प्राचार्य डॉ. देवव्रत आचार्य के सारगर्भित प्रवचन हुए तथा दिल्ली से ही पधारीं भजनोपदेशिका बहन संगीताचार्य एवं बहन सुदेश आर्या के अर्थपूर्ण व मधुर भजन हुए।

इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के कार्यकारिणी के सदस्य श्री जगदीश सींवर विशेष तौर पर पहुंचे। उन्होंने कहा कि गांव-गांव व स्कूलों में जाकर वेदप्रचार किया जाएगा। तीनों दिन भारी संख्या में श्रद्धालुओं ने वेद आधारित प्रवचनों व मधुर भजनों का आनन्द उठाया। आर्यसमाज द्वारा स्वाध्याय में विशेष रुचि रखने वाले महिलाओं व पुरुषों को भेंटस्वरूप आर्ष साहित्य वितरित किया गया और स्वामी दयानन्द चित्रित नववर्ष 2017 का कैलेंडर प्रसाद स्वरूप दिया गया। इस मौके पर डबवाली के प्रधान सन्तोष दुआ, कोषाध्यक्ष भारतमित्र छाबड़ा, इन्द्रपाल आर्य, सुदेश आर्य आदि उपस्थित थे।

मन्त्री, आर्यसमाज डबवाली (सिरसा)

योग शिविर सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठरोहतक द्वारा करवाए जा रहे योग कैम्प में योगशिक्षक नरेन्द्र योगी द्वारा सिरसा शहर के लोगों को योग करवाया जिसमें योगशिक्षक नरेन्द्र योगी ने लोगों को योगासन करवाए व खान-पान से सम्बन्धित जानकारी दी। इस कार्यक्रम निम्न लोगों ने भाग लिया-वनीता गोयल, निधि, मधु साहेवाला, किरन, बलबिन्द्र, प्रियंका, सीमा, निर्मल गोयल, गायत्री, संगीता, अनीता, रिषू, स्वेता, आशा नागपाल, राधेश्याम, महादेव मोगा, प्रेमप्रकाश आदि उपस्थित हुए। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के अन्तरंग सदस्य जगदीश सींवर शेखूपुरिया भी पहुंचे व काफी संख्या में शहरवासियों ने भाग लिया।

19 जनवरी 2017 को मनाया जाएगा आचार्य बलदेव जी का जन्म दिवस

आप सभी आर्यजनों को जानकर अति प्रसन्नता होगी कि त्यागमूर्ति पूज्य आचार्य बलदेव जी महाराज का जन्म-दिवस दिनांक 19 जनवरी 2017 को प्रात: 8 बजे से दोपहर 1 बजे तक राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय गांव सरगथल जिला सोनीपत में बड़े धूमधाम के साथ मनाया जा रहा है। आप सभी आर्य बन्धुओं से निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में गांव सरगथल जिला सोनीपत पहुंचकर पूज्य आचार्य जी के त्यागमय जीवन से प्रेरणा लेकर कार्यक्रम को सफल बनाएं।

-सज्जन आर्य, कोषाध्यक्ष आर्यसमाज सरगथल जिला सोनीपत

www.thearyasamaj.org

पौराणिक अवश्य पढ़ें सत्यार्थप्रकाश

❑ डॉ० बिजेन्द्रपाल सिंह

पौराणिकों की मान्यताएं वैदिक धर्म के विरुद्ध हैं। पृथ्वी पर प्राचीन काल में आर्यधर्म था। महाभारत युद्ध के पश्चात् वैदिक धर्म में क्षीणता आने लगी। वेद को भूलकर लोग अवैदिक व वेदविरुद्ध मान्यताओं पर चलने लगे। धर्म के ठेकेदार पंडित-पुजारियों ने कहना आरम्भ कर दिया कि जो हम कहते हैं वही वेदवाक्य है और समाज को दिग्भ्रमित करने लगे। अब देख रहे हैं कि पौराणिक हर प्रकार के वेदविरुद्ध आचरण ही करने लगे हैं। आर्यों और पौराणिकों में अब अनेक विरोधाभास बन गये हैं। आर्य सत्य को मानते हैं और सत्य यह है कि ईश्वर एक है, वह न जन्म लेता है और न अवतार धारण करता है।

पौराणिकों का मानना है कि राम, कृष्ण, शिव, विष्णु, महेश, गणेश सब ईश्वर के अवतार हैं, वह जन्म भी लेता है। आर्य ईश्वर को निराकार व अजन्मा मानते हैं वह अवतार नहीं लेता। उसे अवतार लेने की आवश्यकता ही नहीं, क्योंकि वह तो सर्वव्यापक है। कण-कण में है, सर्वशक्तिमान है अपनी शक्ति से सब कुछ नियम में रखता है, कर्मों के अनुसार फलों को देने वाला है।

पौराणिक मूर्तिपूजा करते हैं। आर्यधर्म में मूर्तिपूजा नहीं है, क्योंकि वेद में कहीं भी मूर्तिपूजा नहीं है और लिखा है, **'न तस्य प्रतिमास्ति०'** अर्थात् जब वह जन्म ही नहीं लेता, उसको कोई देख नहीं सकता, तो मूर्ति कहां से आई? यह कल्पना मात्र है। मूर्ति मनुष्यों ने अपनी कल्पना से बनाई। विष्णु, महेश, गणेश, शिव आदि नाम एक परेश्वर के ही हैं। वेद के अनुसार ईश्वर एक है। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में ईश्वर के सौ नाम हैं। इस सृष्टि का रचयिता व पालने वाली एक ही सर्वशक्तिमान् सत्ता है वह ईश्वर है। वह ईश्वर एक ही है।

पौराणिक मूर्ति बनाकर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करते हैं। एक बार मैं तथा एक वृद्ध आर्यसमाजी श्री बाबूलाल आर्य को पौराणिक मित्रों ने निमन्त्रण दिया कि हमने बस स्टैण्ड पर मन्दिर बनाया है आप भी आना हम वहां गये उन लोगों ने मूर्ति की प्राणप्रतिष्ठा की थी। वह लोग हम से ही उस मूर्ति को भोग लगाने को कहने लगे। मैं चुप रहा बाबूलाल जी ने लड्डू हाथ में ले लिया। मैं दंग रह गया परन्तु अपने आपको संभाला और सोचने लगा कि हम तो न मूर्तिपूजा करते न भोग लगाते ये बाबूलाल जी को क्या हो गया एक विशुद्ध आर्य होते हुए मूर्ति को भोग लगाने उठ खड़े हो गये परन्तु मुझे विश्वास था कि आर्य अवश्य कुछ विशेष ही किया करते हैं। बाबूलाल जी खुर्जा आर्यसमाज के पुराने वयोवृद्ध आर्यसमाजी हैं। वह उस मूर्ति के पास धीरे-धीरे गये। पौराणिक प्रसन्न हो रहे थे कि वह चाहते थे कि आर्यसमाजी से भोग लगवाकर उनके आर्यत्व को ललकारें। बाबूलाल जी ने मूर्ति के पास जाकर हाथ में लड्डू लिये हुए हंसते हुए उन सब की ओर देखने लगे। वह सब कहने लगे आर्य जी लड्डू खिलाओ। बाबूलाल जी कहने लगे मैं लड्डू खिलाने ही तो आया हूँ और हाथ में लड्डू लेकर तैयार खड़ा हूँ। आप इससे कह दें कि यह मूर्ति अपना मुंह तो खोले क्योंकि लड्डू मुंह खोलने पर ही तो खाया जा सकता है और मैं जब खिलाऊँगा जब यह मूर्ति मुँह खोलेगी। आप भी जब कुछ खाते हो तो मुँह खोलकर ही तो खाना अन्दर रखते हो। उस पर सब चुप हो गये। एक-दूसरे की बंगले झांकने लगे यह तो पत्थर की है आर्य जी! वहीं से एक ने कहा। बाबूलाल ने बोले भले ही पत्थर की हो तुम लोगों ने इसमें प्राण भी तो डाल दिये हैं, फिर तो मुँह खोल देना चाहिए। इस पर पौराणिक भाई चुप हो गये। कोई बात न बनी कहने लगे यह तो आर्यसमाजी हैं, लड्डू नहीं खिलायेंगे। आर्यजी ने कहा कि हम जीवित मूर्तियों को तो खिला सकते हैं, जो मुँह खोल के खा सकती हैं, आप सबको खिला सकते हैं। अरे आप सोचो कि भला पत्थर की मूर्ति कोई भगवान नहीं हो सकती न ही ईश्वर की कोई प्रतिमा है। वह सच्चिदानन्द स्वरूप निराकार सर्वव्यापक सर्वशक्तिमान् है। वह हम सबका पालन कर रहा है, खिला रहा है, हम उसको क्या खिला सकते हैं? यह जगत उसका ही है, यह फल-फूल, वनस्पति, धन आदि सब उसी का ही हम जो कुछ खाते हैं, पहनते हैं, जन्म से मृत्यु पर्यन्त प्रयोग करते हैं, घर, स्वर्ण, वस्त्र, भोजन आदि सब कुछ उसका ही तो है। उसी का दिया हुआ उसी को खिलायें यह उसका अपमान ही तो है। लोग मूर्ति के आगे दीपक जलाते हैं, प्रकाश करते हैं, यह भी अपमान है। उसने दिन में सूर्य जैसा विशाल दीपक दिया है, रात्रि में भी चन्द्रमा की चांदनी फिर भी हम उल्टे ही उसे दीपक जलाकर प्रकाश दिखायें, यह तो शर्म की बात है।

आज भी पौराणिक भाई अन्धविश्वासों में पड़े हैं। मूर्तिपूजा का सबसे बड़ा सामाजिक व धार्मिक रोग है अन्धविश्वास। ऋषि दयानन्द जी ने समाज को रोगमुक्त करने हेतु ही सत्यार्थप्रकाश लिखा जिसे पौराणिकों को अवश्य पढ़ना चाहिये। सत्य को जानकर, मानकर और उस पर आचरण करके ही मनुष्य को श्रेष्ठ बनाया जा सकता है। अन्धविश्वासों पर चलकर जीना जीवन का कोई अर्थ नहीं।

संपर्क-चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा। मो० 8979794715

महान् क्रान्तिकारी पण्डित..... पृष्ठ 2 का शेष....

साम्राज्य का नाश हो। रामप्रसाद बिस्मिल **विश्वानिदेव** मन्त्र का पाठ करने लगे और **वन्दे मातरम्** का उद्घोष करते हुए फांसी पर झूल गए।

फांसी से पहले कुछ लोग मिलने आए थे उन लोगों को बिस्मिल ने कहा था—

शहीदों की चिताओं पर लगेगे हर वर्ष मेले, वतन पर मिटने वालों का यही नामो निशां होगा॥

रामप्रसाद बिस्मिल एक महान् क्रान्तिकारी के साथ-साथ सिद्ध हस्त लेखक और उच्चकोटि के कवि थे। उन्होंने हिन्दी और उर्दू में कई पुस्तकें भी लिखी हैं। फांसी से तीन दिन पहले इन्होंने अपनी आत्मकथा लिखी जो पढ़ने योग्य है तथा नवयुवकों के लिए प्रेरणास्रोत का काम करती हैं। उन पुस्तकों के नाम निम्नवत् हैं—

(1) अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली? (2) बोलशेविको की करतूत, (3) कैथराइन, (4) क्रान्तिकारी जीवन, (5) स्वदेशी रंग, (6) मन की लहर, (7) यौगिक साधना, (8) आत्मकथा।

जेल में रहकर भी बिस्मिल नित्यप्रति हवन करके ही भोजन किया करते थे। बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में लिखा है—

मैं सर्दी-गर्मी बरसात में प्रातः 3 बजे जगकर सन्ध्या से निवृत्त होकर हवन करता था। मेरी दिनचर्या व नियमों का पालन देखकर पहरे के सिपाही अपने गुरु से भी अधिक मेरा सम्मान करते थे।

अन्त में बिस्मिल की इच्छा उन्हीं की शब्दों में लिखते हैं—

सरफरोसी की तमन्ना अब हमारे दिल में है। देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है॥
यदि देश हित मरना पड़े मुझको सहस्त्रों बार भी। तो भी न मैं कब्र को निज ध्यान में लाऊँ कभी॥
हे ईश भारतवर्ष में शत बार मेरा जन्म हो। कारण सदा मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो॥

सूचना

सभी आर्यसमाजों को, आर्य शिक्षण संस्थाओं को सूचित किया जाता है कि अपने सभी प्रकार के प्रचार कार्यक्रमों का विवरण 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक पत्र में छापने के लिए भेजें। साथ ही विद्वानों, लेखकों, बुद्धिजीवियों से आग्रह है कि वे अपने लेख, कविता आदि निम्न ई-मेल अथवा पते पर भेजें।

सम्पादक 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक मा० रामपाल आर्य ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स, माता मन्दिर चौक, पाड़ा मोहल्ला, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001 से प्रकाशित। पत्र में प्रकाशित लेखसामग्री से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
प्रत्येक विवाद के लिए न्यायक्षेत्र रोहतक न्यायालय होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जाएगी।